https://shikshabodh.in/

SHIKSHA BODH

(The Journal of Education and Humanities)

ISSN: 3139-5880 IMPACT FACTOR: 6.50

VOLUME-1|ISSUE-1|Jan-March, 2026

ज्ञान की संरचना में तर्क और इन्द्रिये अनुभव एक :द्वन्द

***तौसीफ मलिक**
सहायक आचार्य
शिक्षक शिक्षाविभाग) ,बी०एड०)
गाँधी महाविद्यालय,उरई ,जालौन,उत्तर प्रदेश
ईमेल-touseefmalik1991@gmail.com

****पंकज कुमार गुप्ता**
,सहायक आचार्य
शिक्षक शिक्षा विभाग) ,बी०एड०)
गाँधी महाविद्यालय,उरई ,जालौन, उत्तर प्रदेश
ईमेल-Pankajkumarg511@gmail.com

सारांश:

ज्ञानमीमांसा दर्शनशास्त्र की वह शाखा है जो ज्ञान के सिद्धांत से संबंधित है। यह ज्ञान की प्रकृति, औचित्य और विश्वास की तर्कसंगतता का अध्ययन करती है। ***सुकरात और प्लेटो*** से ले आधुनिक जगत के दार्शिनिक के लेखो,विचारों में कोई स्पष्ट दावा किया जा सकता है कि ज्ञान क्या है । हम उस मार्ग की केवल कल्पना कर सकते है ।जब प्रारम्भिक सवाल के उत्तर पर ही इतनी असहमति है है कि ज्ञान के विभिन्न प्रकार क्या हैं, जिसकी कोई सर्वमान्य ”मास्टर सूची“ मौजूद ही नहीं है। ऐसा इसलिए है क्योंकि ज्ञान विशुद्ध रूप से दर्शनशास्त्र कि प्रकृति का है; बहस सदियों से चली आ रही है, तर्कतथ्यों को पीछे छोड़ देते हैं ,, और हर किसी की इस बारे में अलग-अलग राय है ।हम इस आलेख में ज्ञान क्या है ,क्या नहीं है की चर्चा करेंगे । **जी .टी. बी, *सिद्धांत*** *के साथ साथ दो दार्शनिक विमर्श पर चर्चा करंगे तर्कबुद्धिवाद* और ***अनुभववाद***।

संकेत शब्द- *ज्ञानमीमांसा,अनुभवा द ,तर्कवाद ,सिधान्त ०बी०टी०जी ,*

प्रस्तावना:

किसी भी व्यक्ति के लिए,कोई चीजें हैं, जो वह जानता है और कोई चीजें हैजो वह नहीं जानता हैं। हम उन चीजों को नहीं जानते हैं। , में हम गलत हैं। ऐसी स्थिति में ज्ञान सत्य को प्राप्त करने का एक तरी जिनके बारेकेया तरीके की तरह प्रतीत होता है। ज्ञान का विश्लेषण , ” कि वास्तव में इस तरह के ,इस बात को स्पष्ट करने के प्रयास से संबंधित हैसत्य पर पहुंचना“ क्या कहलाता है आगे आलेख में हम ज्ञान के ***त्रिपक्षीय*** सिद्धांत)***जे० टी० बी०(*** पर आपका ध्यान केन्द्रित करेंगे।

ज्ञान के पारंपरिक ”)त्रिपक्षीय विश्लेषण के तीन घटक हैं। (“

सत्य हो जिस पर विश्वास हो

और जिसकाप्रमाण हो

उदाहरण के तौर पर

T जानता है कि A सत्य है

T को A के होने पर विश्वास है

तथा T के पास के A के सम्बन्ध के प्रमाण है

सत्य की स्थिति

अधिकांश दार्शनिको ने यह इसे पाया है कि जो गलत है उसे नहीं जाना जा सकता है। उदाहरण के लिए***, कांग्रेस*** ने 20का भारतीय 24 आम चुनाव नहीं जीता। नतीजतन, कोई नहीं जानता कि कांग्रेस ने चुनाव जीतीं। कोई केवल वही जान सकता है जो सत्य है। कभीचीज़ के बारे में बहुत आश्वस्त होते हैं। जो गलत हो जाती है कभी जब लोग किसी ऐसी-, तो हम उनकी स्थिति का वर्णन करने के लिए ”जानता था“ शब्द का उपयोग करते हैं। कई लोगों को उम्मीद थी कि ***कांग्रेस*** चुनाव जीतेंगे। शिथिल रूप से बोलते हुए, कोई यह

भी कह सकता है कि बहुत से लोग ”जानते थे“ कि कांग्रेस चुनाव जीतेंगे ,जब तक वह हार नहीं गईlयहाँ पर हम यह कह सकते है- ”किजानता है“ एक सक्रिय क्रिया नहीं है। दूसरा उदहारण लेते है जैसे ”मुझे पता था कि ***हिमाचल प्रदेश*** में ***भाजपा***जीतने जा रही है , ।जो कि शाब्दिक रूप से सच नहीं है– एक तरह की अतिशयोक्ति के रूप में

किसी चीज की सच्चाई के लिए यह आवश्यक नहीं हैकि कोई भी जान सके या साबित कर सके कि यह सच है। सभी सत्य स्थापित , सत्य नहीं हैं। यदि आप एक सिक्का उछालते हैं और कभी नहीं जांचते हैंकि यह कैसे निचे गिरेगा ,, तो यह सच हो सकता है कि यह सिर की तरफ गिरे , भले ही किसी के पास बताने का कोई तरीका न हो। सत्य यह है कि चीजें कैसी हैं, न कि उन्हें कैसे दिखाया जा सकता है। इसलिए जब हम कहते हैं कि केवल सच्ची चीजें ही जानी जा सकती हैं, तो हम इस बारे में कुछ नहीं कह रहे हैं कि कोई भी सत्य तक कैसे पंहुचा जा सकता है। लेकिन ज्ञान का सत्य के साथ एक प्रकार का संबंध दिखता प्रतीत हो रहा है कुछ जानने का अर्थ – है किसी तथ्य तक एक निश्चित तरीके से पहुचना।

विश्वास की स्थिति

विश्वास की स्थिति सत्य की स्थिति से थोड़ी अधिक विवादास्पद है। विश्वास की स्थिति के पीछे सामान्य विचार यह है कि आप केवल वही जान सकते हैं जो आप मानते हैं। किसी बात पर विश्वास न करना उसे जानने से रोकता है। ***जे०टी०बी० सिद्धांत*** के संदर्भ में ”विश्वास“ का अर्थपूर्ण विश्वास ,, या एकमुश्त विश्वास से है। एक कमजोर अर्थ में, कोई बहुत आश्वस्त होने के आधार पर कुछ ”विश्वास“ कर सकता है कि यह शायद सच है इस कमजोर अर्थ में –, कोई व्यक्ति जो बीजेपी को हिमाचल प्रदेशविधानसभा का चुनाव जीतने के प्रतिपसंदकरता था, यहां तक कि उनके हारने की एक गैरवना को पहचानते हुएतुच्छ संभा-, कि उसे”विश्वास“ था कि***बीजेपी*** जीत जाएगी। और वह उसे ही जीता हुआ मानता है तो ज्ञान के सम्बन्ध में विश्वास एक समस्या जैसा प्रतीत होने लगता है।

कॉलिन रेडफोर्ड)1966)अपने लेख में ज्ञान के सम्बन्ध में विश्वास पर उदाहरण देते हुआ कहते है कि। मान लीजिए कि अल्बर्ट से अंग्रेजी के इतिहास पर एक परीक्षाली जा रही है। प्रश्नों में से एक प्रश्न है” :महारानी एलिजाबेथ की मृत्यु कब हुई?”अल्बर्ट को नहीं लगता कि वह जानता है, लेकिन फिर भी सवाल का सही जवाब दे देता है। इसके अलावा, वह कई अन्य सवालों के सही जवाब देता है। जिनके बारे में उसे नहीं लगता था:कि वह जवाब जानता था। आइए हम एलिजाबेथ के बारे में अल्बर्ट के प्रश्न के उत्तर पर ध्यान दें ,

एलिजाबेथ की मृत्यु 1603 में हुई।

रेडफोर्ड इस उदाहरण के बारे में निम्नलिखित दो दावे करते है:

अल्बर्ट विश्वास नहीं करता है। (ए)

अल्बर्ट जानता है। (बी)

इस तरह के मामलों के बारे में रेडफोर्ड के अंतर्ज्ञान मूर्खतापूर्ण नहीं लगते हैं; ***मायर्स) शुट्ज़ और श्विट्ज़गेबेल-2013)*** से सबूत मिलते हैं कि कई साधारण वक्ता ने रेडफोर्ड के सुझाव के तरीके पर प्रतिक्रिया दी हैं।

के समर्थन में (ए), रेडफोर्ड ने जोर दिया कि अल्बर्ट सोचता है कि वह सवाल का जवाब नहीं जानता है। वह अपने जवाब पर विश्वास नहीं करता क्योंकि वह इसे केवल अनुमान के रूप में लेता है।

के समर्थन में (बी), रेडफोर्ड का तर्क है कि अल्बर्ट का जवाब सिर्फ एक भाग्यशाली अनुमान नहीं है। यह तथ्य कि वह अधिकांश प्रश्नों का सही उत्तर देता है, इंगित करता है कि उसने वास्तव में ऐसे ऐतिहासिक तथ्यों को सीखा है, और कभी नहीं भूला है।

चूंकि वह को सच मानता है (बी) और (ए), रेडफोर्ड का मानना है कि ज्ञान के लिए विश्वास आवश्यक नहीं है। लेकिन में (बी) और (ए) से किसी एक का विरोध किया जा सकता है।

डेविड रोज और जोनाथन शेफ़र)2013)इस विमर्श पर कहते हैकि वैकल्पिक रूप से ,, कोई से इनकार कर सकता है (बी), यह तर्क देते हुए कि अल्बर्ट का सही उत्तर ज्ञान की अभिव्यक्ति नहीं है, शायद इसलिए, क्योंकि उसकी व्यक्तिपरक स्थिति को देखते हुए, उसके पास विश्वास करने का औचित्यप्रमाण की स्थिति पर चर्चा करने वाला हु।/प्रमाण नहीं है। आगे मैं औचित्य /

प्रमाण की स्थिति

मान लीजिए कि***मलिक*** एक सिक्का उछालता है, और विश्वास करता है कि यह सर के बल गिरेगा। यदि संयोग से सिक्का सर के बल गिरता है, तो***मलिक*** का विश्वास सच था; लेकिन इस तरह का एक भाग्यशाली अनुमान कोई ज्ञान नहीं है।उसके साथ साथ हम यह कह सकते है या :किउसका विश्वास कुछ ज्ञानमीमांसीय अर्थों में उचित होना चाहिए ,इसे उचित ठहराया जाना चाहिए।

दार्शनिको के बीच काफी असहमति है कि यहां प्रासंगिक प्रकार का औचित्य क्या है।

कोनी और फेल्डमैन एक आंतरिकवादी दृष्टिकोण का एक उदाहरण प्रस्तुत करते हुए स्पष्ट करते है कि अवचित्त काफी हद तक प्रासंगिक हो सकता है

इस शोध आलेख के अगले हिस्से में हम इस बात पर विमर्श करेंगे कि ज्ञान सर्जन के मुख्य आधार क्या हो सकते है तथा हमारे विमर्श में उसकी विवेचना भी एक मुख्य हिस्सा रहेगी।

समाज के प्रारंभ होने के साथ ही मानव तथा मानवों के समूह में जानना सबसे विशिष्ट मानवीय प्रक्रियाओं में से एक हो गयातथाज्ञान , इसका परिणामथा।इसका मतलब है कि जानना और ज्ञान प्राचीन काल से ही मानवीय जांच का विषय रहेहैं। प्लेटो और अरस्तू से शुरू होने वाले दार्शनिकों ने ज्ञान के सिद्धांत के रूप में ज्ञानमीमांसा विकसित की, जो इस मौलिक प्रश्न का उत्तर देने की कोशिश कर रही था:कि ज्ञान क्या है? उनके समर्थन में कई उत्तर और कई तर्क दिए गए, लेकिन उनमें से कोई भी सिद्धांत अभी तक पूरी तरह से संतोषजनक नहीं माना गया है। ज्ञान को परिभाषित करना और इसकी प्रकृति की व्याख्या करना अनिश्चित सा साबित हुआ और बिना किसी ठोस और सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत परिणाम के अधिकांश सिद्धांतों को दो प्रमुख दृष्टिकोणों में विभाजित किया गया है:***(नेटा और प्रिचर्ड 2009; रसेल 1972)।***

बुद्धिवाद

अनुभववाद।

सरल शब्दों में, दोनों सिद्धांत यह स्वीकार करते हैं कि ज्ञान एक उचित सत्य विश्वास है, लेकिन वे उन तरीकों को दिखाने में विफल रहते हैं जिनके माध्यम से कोई सत्य को पाया जा सकता है या सच्चे विश्वास को उचित ठहरा जा सकता है।

बुद्धिवादतर्कवाद /

तर्कवाद केअग्रणी दार्शनिक प्लेटो, तर्कवाद के व्याक्ख्या करते हुए तर्क देते हैं कि ज्ञान एक तर्क प्रक्रिया का परिणाम है और हमारे संवेदी अनुभव की इसमें कोई भूमिका नहीं है। ज्ञान केवल स्वयंसिद्धों पर आधारित तर्कसंगत मार्ग से प्राप्त किया जा सकता है, उदाहरण तौर पर जैसे गणित विषय जो किसी भी संवेदी अनुभव का सहारा लिए ज्ञान के सत्यता को स्वीकारता है तथा उसे सर्वाभावमिक मानता है, और इसे राय से हम इस निष्कर्स पर पहुचते है कि ज्ञान हमारी इंद्रियों का उत्पाद है। विचारों के बारे में चर्चा करते हुए प्लेटो अपने सिद्धांत में, एक "बिल्ली" के के बारे में तर्क देते है जो कि वास्तविक दुनिया में एक विशेष वस्तु का प्रतिनिधित्व करता है और "बिल्ली" की अवधारणा जो कि बिल्लीपन की शाश्वत दुनिया से आती है।

जबकि आमुक "बिल्ली" पैदा होती है और मर जाती है, लेकिन"बिल्ली" की अवधारणा विचारों की शाश्वत दुनिया में बनी रहती है। ज्ञान उस शाश्वत दुनिया का हिस्सा है। प्लेटो के ज्ञान के ढांचे की व्याख्या करते हुए, ***बर्ट्रेंड रसेल (1972, पृष्ठ 152)***लिखते हैं कि "हम स्पर्श के माध्यम से कठोर और नरम को समझते हैं, लेकिन यह मन ही है जो यह तय करता है कि वे मौजूद हैं।केवल मन ही अस्तित्व तक पहुँच सकता है, और अगर हम अस्तित्व तक नहीं पहुँचते हैं तो हम सत्य तक नहीं पहुँच सकते हैं"। हम वास्तविक दुनिया को केवल इंद्रियों के माध्यम से नहीं जान सकते क्योंकि वे हमें गुमराह या ज्ञान प्राप्ति की राह से भटका सकती हैं। निष्कर्ष में, "ज्ञान प्रतिबिंब में होता है, छापों में नहीं, और धारणा ज्ञान नहीं है"***(रसेल, 1972; पृष्ठ 153)।***

गणित और गणितीय प्रस्तावों के बारे में चर्चा करते समय हम प्लेटो से सहमत हो सकते हैं। यह समझने के लिए कि $y = a + bx$ दो चरों के बीच संबंध को दर्शाता है, हमें किसी संवेदी बोध की आवश्यकता नहीं है। हमें केवल अमूर्त प्रतीकों के साथ एक तर्क प्रक्रिया की आवश्यकता है। लेकिन यह विज्ञान का एक विशेष क्षेत्र है और इसे पूरे मानव अस्तित्व पर सामान्यीकृत नहीं किया जा सकता है।

रेने डेसकार्टेस ने नई वैज्ञानिक खोजों को एकीकृत करके बुद्धिवादतर्कवाद / को आधुनिक दर्शन का आधार बनाया। उन्होंने हर चीज पर संदेह करने और निश्चितता की खोज करने की प्रसिद्ध विधि की स्थापना की: "मैं तब तक कुछ और नहीं कर सकता, जब तक कि मैं निश्चित रूप से यह न जान लूं कि दुनिया में कुछ भी निश्चित नहीं है"***(डेसकार्टेस, 1997; पृष्ठ 139)।***मन से आने वाले अपने विचारों और संवेदी तंत्र से आने वाली सूचनाओं का तुलनात्मक विश्लेषण करके, डेसकार्टेस इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि विचार ही एकमात्र ऐसा गुण है जो आपका है जिसे आपसे अलग नहीं किया जा सकता: "सोचने के बारे में वह आगे कहते है कि, मैं यहाँ पाता हूँ कि विचार एक ऐसा गुण है जो मेरा है; इसे मुझसे अलग नहीं किया जा सकता। मैं हूँ, मैं मौजूद हूँ, यह निश्चित है"***(डेसकार्टेस, 1997; पृष्ठ 141)***

इसका मतलब है कि हमारे अस्तित्व की एकमात्र कसौटी यह तथ्य है कि हम सोचते हैं और सोचने के माध्यम से हम ज्ञान प्राप्त करते हैं।

उनके प्रसिद्ध सूत्रीकरण ***"कोगिटो, एर्गो सम!"*** में, मन और शरीर दो अलग-अलग दुनिया की तरह हैं, और जबकि शारीरिक संवेदनाएँ विश्वसनीयता की परीक्षा में विफल हो जाती हैं, सोचना एक अनूठी विशेषता साबित होती है जो विश्वसनीय और निश्चित है। अंत में, वह टिप्पणी करते हैं: "मैं, हालांकि, एक वास्तविक चीज़ हूँ और वास्तव में मौजूद हूँ; लेकिन कौन सी चीज़? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए वह कहते है कि, एक ऐसी चीज़ जो सोचती है"***(डेसकार्टेस, 1997; पृष्ठ 142)*** मन और शरीर के इस द्वैतवाद के बारे में पहले यूरोप और बाद में अमेरिका में एक क्रांति आई जिसने विज्ञान, दर्शन और शिक्षा पर बहुत बड़ा प्रभाव डाला। आज भी, कई लेखक ज्ञान को तर्कसंगत और पूरी तरह से मानसिक प्रक्रियाओं पर आधारित मानते हैं।

बुद्धिवाद का प्रतिद्वंदी अनुभववाद

अनुभववाद बुद्धिवाद के विपरीत दृष्टिकोण के रूप में उभरा। ***प्लेटो के छात्र अरस्तू*** का मानना था कि विचारों और रूपों को भौतिक वस्तुओं और संवेदी जानकारी से अलग नहीं किया जा सकता।

ज्ञान को पहले से नहीं बनाया जाता है और यह किसी निश्चित रूप में जन्मजात नहीं होता है। यह वास्तविक दुनिया के साथ हमारे संवेदी इंटरफेस के माध्यम से बनाया जाता है, और अंततः हमारे दिमाग द्वारा संसाधित किया जाता है।

जॉन लॉक ने इस दृष्टिकोण को जारी रखते हुए इस बात पर जोर दिया कि बाहरी दुनिया में वस्तुएं मौजूद हैं और हमारी संवेदी धारणा हमारे ज्ञान का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत है। कई समकालीन दार्शनिकों ने उनके बीच विभिन्न संश्लेषणों के आधार पर वैचारिक रूपरेखा तैयार करके तर्कवाद और अनुभववाद के बीच की खाई को पाटने की कोशिश की।

मन और शरीर के ***कार्टेशियन द्वैतवाद*** के विपरीत, बौद्ध धर्म और कन्फ्यूशीवाद पर आधारित जापानी बौद्धिक परंपरा ने तीन व्यापक आधारों के साथ मन और शरीर का एक एकीकृत परिप्रेक्ष्य बनाया: ***(नोनाका और टेकाउची, 1995; पृष्ठ 27)***

(1) मानवता और प्रकृति की एकता;

(2) शरीर और मन की एकता;

(3) स्वयं और दूसरे की एकता।

इन लक्षणों ने ज्ञान के प्रति जापानी दृष्टिकोण के साथ-साथ प्रबंधन प्रथाओं के प्रति जापानी दृष्टिकोण की नींव रखी है"। इसका मतलब है कि ज्ञान संवेदी प्रणाली में निहित है और केवल अपने अंतिम प्रसंस्करण चरण में अमूर्त विचारों के लिए खुला है। वास्तविक दुनिया के साथ उनका संबंध उनकी इंद्रियों के माध्यम से है और उन्हें ज्ञान की प्रकृति को समझने के लिए किसी शाश्वत या आध्यात्मिक दुनिया से अपील करने की आवश्यकता नहीं है। मन और शरीर दो अलग-अलग वास्तविकताएँ नहीं हैं, बल्कि एक एकीकृत वास्तविकता है जो लोगों के संपूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण करती है। "जापानियों के अनुसार ज्ञान वह है जो संपूर्ण व्यक्तित्व के दृष्टिकोण से प्राप्त किया जाता है। यह अभिविन्यास अप्रत्यक्ष, बौद्धिक अमूर्तता पर व्यक्तिगत और शारीरिक अनुभव को महत्व देने का आधार साबित हुआ है"***(नोनाका और टेकाउची, 1995; पृष्ठ 29)।***

निष्कर्ष

विभिन दार्शनिक के मतों विश्वासों तथा साहित्य से यह बात स्पष्ट होती प्रतीत हो रही हैकि ज्ञान किसी व्यक्ति या वस्तु के बारे में , परिचय, जागरूकता या समझ है, जैसे तथ्य, जानकारी, विवरण या कौशल, जो अनुभव या शिक्षा के माध्यम से बोध होती जिसेखोज या सीखने के माध्यम से प्राप्त किया जाता है। लेकिन इस बात को अभी भी स्पष्ट रूप से नही कहा जा सकता हैकि ज्ञान कि संरचना या , विश्वास और प्रमाण मे ,उसके सर्जन में सत्यः अधिक आवश्यक क्या है और क्या नहीं बुद्धिवादियो का तर्क सत्य को जहा , उसका खंडन करता है हम किसी एक वाद को पूरी तरह से सत्य सिद्ध करने में आज भी असमर्थ सर्वभोमिक मानता है वही अनुभववाद है लेकिन हम अवश्य कह सकते है कि इन दोनों वादों कि सत्यता किसी विशेष काल परिस्थिति में अवश्य ही प्रमाणित कि जा सकती है। साथ ही साथ हम यह भी कह सकते है। कि ज्ञान का स्वरुप और उसकी उपयोगिता समयकाल और परिस्थिति से प्रभावित , होती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ:

Conee, Earl and Richard Feldman, 2004, *Evidentialism: Essays in Epistemology*, Oxford: Oxford University Press. Doi:10.1093/0199253722.001.0001

Kaplan, Mark, 1985, "It's Not What You Know that Counts", *The Journal of Philosophy*, 82(7): 350–63. Doi:10.2307/2026524

Myers-Schulz, Blake & Eric Schwitzgebel, 2013, "Knowing that *P* without Believing that *P*", *Noûs*, 47(2): 371–384. Doi:10.1111/nous.12022

Radford, Colin, 1966, "Knowledge—By Examples", *Analysis*, 27(1): 1–11. Doi:10.2307/3326979

Rose, David & Jonathan Schaffer, 2013, "Knowledge Entails Dispositional Belief", *Philosophical Studies*, 166(supplement 1): 19–50. Doi:10.1007/s11098-012-0052-z

Rysiew, Patrick, 2001, "The Context-Sensitivity of Knowledge Attributions", *Noûs*, 35(4): 477–514. Doi:10.1111/0029-4624.00349

–––, 2011, "Epistemic Contextualism", *The Stanford Encyclopedia of Philosophy* (Winter 2011 Edition), Edward N. Zalta (ed.), URL = <https://plato.stanford.edu/archives/win2011/entries/contextualism-epistemology/>

Schaffer, Jonathan, 2004, "From Contextualism to Contrastivism", *Philosophical Studies*, 119(1–2): 73–104. doi:10.1023/B:PHIL.0000029351.56460.8c